अस्मिता का अर्थ है- पहचान तथा भाषाई अस्मिता से तात्पर्य है- भाषा बोलने वालों की अपनी पहचान। 'अस्मिता' शब्द के संदर्भ में डॉ. नामवर सिंह ने कहा है कि- "हिंदी में 'अस्मिता' शब्द पहले नहीं था। 1947 से पहले की किताबों में मुझे तो नहीं मिला और संस्कृत में भी अस्मिता का यह अर्थ नहीं है।'अहंकार' के अर्थ में आता है, जिसे दोष माना जाता है। हिंदी में 'आईडेंटिटी' का अनुवाद 'अस्मिता' किया गया और हिंदी में जहाँ तक मेरी जानकारी है, पहली बार अज्ञेय ने 'आईडेंटिटी' के लिए अनुवाद 'अस्मिता' शब्द का प्रयोग हिंदी में कियाहै।"1

संसार में प्रत्येक व्यक्ति की अपनी निजी विशेषताएँ होती है। भाषा उनमें से एक है। यह प्रमाणित हो चुका है कि प्रत्येक व्यक्ति की भाषा दूसरे से अलग होती है। एक ही भाषा का प्रयोग करने वाले लोगों में उच्चारण, शब्द चयन एवं शैली के स्तर पर भेद पाए जाते हैं। हिंदी में कविता के संदर्भ में जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', तथा 'अज्ञेय' आदि की भाषा एक-दूसरे से भिन्न दिखाई पड़ती है। इसी प्रकार किसी वर्ग विशेष, समाज विशेष एवं राष्ट्र विशेष के लोगों की भाषा भी दूसरे से भिन्न होती है। अतः कह सकते हैं कि किसी वर्ग, समाज एवं राष्ट्र आदि की अस्मिता उसकी भाषा में भी प्रतिबिंबित होती है। अस्मिता को प्रकट करने वाली भाषा को हम मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा जातीय आदि कई आधार पर देख सकते हैं।

मनोवैज्ञानिक अस्मिता का संबंध भाषा से होता है। भाषा के द्वारा व्यक्ति की मनःस्थिति का पता लगाया जा सकता है। व्यक्ति के विचारों को जानने का प्रमुख साधन भाषा ही होता है। किसी बालक, युवक तथा बुजुर्ग की भाषा में अंतर होता है। भाषा के द्वारा उनकी सोच एवं अनुभव आदि का परिचय हमें सहज रूप में मिल जाता है। भाषा के द्वारा हम यह भी जान सकते हैं कि कोई व्यक्ति अंतर्मुखी है अथवा बहिर्मुखी है। अंतर्मुखी व्यक्ति अक्सर मित्भाषी तथा बहिर्मुखी व्यक्ति वाचाल होते हैं।

भौगोलिक अस्मिता का परिचय भी भाषा के माध्यम से मिलता है। विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों की भाषा में अंतर देखा जा सकता है। इन क्षेत्रों में प्रयुक्त शब्दावली भी अलग-अलग होती है। कृषि प्रधान देश अथवा क्षेत्र में कृषि से संबंधित शब्दों की अधिकता होती है। यदि किसी भौगोलिक क्षेत्र में कोई वस्तु अधिक पाई जाती है, तो वहाँ उस वस्तु के सूक्ष्म से सूक्ष्म भेद के लिए भी अलग-अलग शब्द होते हैं। हिंदी में पानी के ठोस रूप के लिए केवल 'बर्फ' शब्द का प्रयोग होता है, वहीं अंग्रेजी में 'आइस'(ice) तथा 'स्नो'(snow) दो शब्दों का प्रयोग होता है। एस्कीमों के यहाँ बर्फ के विभिन्न प्रकार एवं स्थितियों को बताने वाले कई शब्दों का प्रचलन है। एस्किमों बर्फ पर रहते हैं। बर्फ के विभिन्न छवियों से परिचित होना उनके लिए ज़रूरी भी है। पीटर ट्रुटगिल के अनुसार – "यह एस्किमों के लिए आवश्यक है कि उनमें विभिन्न प्रकार के बर्फ के बीच निपुणतापूर्वक अंतर करने की योग्यता हो।"2

किसी व्यक्ति से बातचीत कर के भी हमें उसके भौगोलिक क्षेत्र अर्थात् निवास स्थान का पता चल जाता है। हिंदी भाषा में ही कई बोलियाँ आती है। जब कोई व्यक्ति मानक हिंदी में बात करता है, तो उसमें उसके क्षेत्र की बोली का थोड़ा प्रभाव आ ही जाता है। उत्तर प्रदेश के गाजीपुर तथा आगरा क्षेत्र (जिला) में रहने वाले दो लोगों की हिंदी के बीच फर्क होता है। यह फर्क उनकी बातचीत में देखा जा सकता है। पीटर ट्रुटगिल ने यह स्थापना दी है कि-" हमारे उच्चारण एवं बातचीत के द्वारा यह सामान्य रूप से पता चल जाता है कि हम किस देश से आए हैं।"3

धर्म एवं जाति के आधार पर बनी अस्मिता भी महत्वपूर्ण होती है तथा इसका भाषा से गहरा जुड़ाव होता है। भारत में रहने वाले हिंदू-मुस्लिम एवं ईसाइयों की भाषा का अध्ययन करने पर हम देख सकते हैं कि हिंदी बोलते हुए हिंदुओं का झुकाव संस्कृत के प्रति, मुसलमानों का अरबी-फारसी के प्रति तथा ईसाइयों का अंग्रेज़ी के प्रति होता है। धर्म एवं जातिगत पहचान बनाए रखने के लिए ही कनाडा में रहने वाला हिंदू परिवार विवाह के समय संस्कृत में मंत्रों का उच्चारण करवाता है। इसके बावजूद भी भाषा का धर्म से संबंध इतना सीधा और सरल नहीं है। भाषा को किसी धर्म विशेष से जोड़कर हमेशा नहीं देखा जा सकता। बंग्लादेश में इस्लाम को मानने वाले बहुसंख्यक लोगों ने अरबी-फारसी अथवा उर्दू के स्थान पर बँगला भाषा को स्वीकार कर भाषा और धर्म के गहरे संबंध के मिथ को भी एक प्रकार से तोड़ा है। आज दुनिया में कई ऐसे इस्लामिक देश हैं जो भाषा की दृष्टि से अलग-अलग हैं,जैसे पाकिस्तान, अफगानिस्तान, इराक, तुर्की आदि।

सामाजिक अस्मिता का भाषा से गहरा संबंध होता है। दो अलग-अलग समाज के मध्य हम भाषा के आधर पर भी अंतर देख सकते हैं। यहाँ तक की एक भाषा समाज में भी विभिन्न वर्गों की अस्मिता भाषा के द्वारा व्यक्त हो जाती है। विभिन्न वर्ग अपनी विशिष्ट भाषिक क्षमता, शब्दावली एवं भाषा-शैली के माध्यम से स्वयं की अस्मिता को उजागर कर देते हैं। उदाहरणस्वरूप समाज में निम्न एवं उच्च वर्ग की भाषा, शिक्षित एवं अशिक्षित वर्ग की भाषा, शहरी एंव ग्रामीण वर्ग की भाषा,अधिकारी एंव अधीनस्थ वर्ग की भाषा आदि को हम देख सकते हैं। यहाँ तक की स्त्री और पुरुष वर्ग की भाषा का भी इस दृष्टि से अध्ययन किया जा सकता है।प्रसिद्ध भाषाविद् लेकऑफ (lackoff) का यह मानना है कि स्त्रियों का शब्द चयन भी पुरुषों से भिन्न होता है। उनके अनुसार “आकर्षक,मोहक,दैवीय, प्यारा,मधुर जैसे विशेषण साधारणतः केवल स्त्रियों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है।”4 इसके अतिरिक्त पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की भाषा अधिक विनम्र एवं मानक होती है तथा वे वर्जित एवं अश्लील शब्दों का भी कम प्रयोग करती हैं।

भारत के संदर्भ में सामाजिक अस्मिता का भाषा से गहरे संबंध का पता इसी बात से लगाया जा सकता है कि यहाँ राज्यों का गठन भाषा को आधार बनाकर किया गया है। रामविलास शर्मा तथा रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव जैसे भाषाविद् एवं आलोचक भाषा के आधार पर ही उत्तर भारत की जनता को एक सूत्र में बाँधने की वकालत करते हुए हिंदी जाति तथा हिंदी भाषाई समाज की बात करते हैं। भाषा को अस्मिता का सवाल बनाकर ही 1960 ई. में महाराष्ट्र को दो उपखण्डों – महाराष्ट्र तथा गुजरात में विभक्त किया गया था। पंजाब से हरियाणा को अलग करने के पीछे भी भाषा एक प्रमुख कारण थी। आज पश्चिम बंगाल से गोरखालैंड को अलग करने के लिए जो आंदोलन चलाए जा रहे हैं, उसमें भाषा को एक प्रमुख हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। राज्यों के टूटने से समाज एवं राष्ट्र का भला होता है अथवा नहीं, यह एक अलग बहस का मुद्दा है, किंतु इस बात से हम इनकार नहीं कर सकते हैं कि राज्य के बँटवारे में भाषा एक प्रमुख कारक तत्त्व होता है। अतः देश में राज्यों के पुनर्गठन के पीछे भौगोलिक, राजनीतिक तथा आर्थिक कारणों से परे भाषा को आधार बनाकर निर्णय लेना वस्तुतः भाषा से जुड़ी अस्मिता के महत्व को ही दर्शाता है। इससे यह तथ्य भी सामने आता है कि किसी समाज विशेष के सदस्यों को जोड़कर रखने में भी भाषा की प्रमुख भूमिका होती है। ठीक इसी प्रकार एक समुदाय का दूसरे समुदाय से अलगाव का प्रमुख कारण भी भाषा ही होती है।

भाषाई अस्मिता के आधर पर हम राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा में भी अंतर देख सकते हैं। राजभाषा वस्तुतः प्रशासनिक प्रयोजन एवं आर्थिक विकास के लिए एक प्रकार से जनता पर थोपी गई भाषा होती है, वहीं राष्ट्रभाषा का संबंध् सामाजिक अस्मिता की भाषा से है। यह किसी देश की अपनी भाषा होती है। लोगों का अपने राष्ट्रभाषा के प्रति भावात्मक रूप से जुड़ाव होता है। यह देश की एकता को एक मजबूत आधर प्रदान करता है। किसी भी देश के लोगों की पहचान उस देश की राष्ट्रभाषा से होती है, न कि राजभाषा से। भारत में हिंदी एवं अंग्रेजी भाषा को इस संदर्भ में देखा जा सकता है।

भारत में विभिन्न राज्यों का गठन भाषा के आधार पर हुआ है। इसके बावजूद भी यहाँ भाषाओं के आधर पर बनी अस्मिता विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक प्रयोजनों के कारण सोपानिक ढंग से स्तरीकृत है। अतः एक राज्य का व्यक्ति केवल एक भाषा का ही प्रयोग नहीं करता। स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में वह बोली, भाषा तथा अंतर्राष्ट्रीय भाषा का प्रयोग करता है। रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के अनुसार- “अगर भाषाएँ, सामाजिक अस्मिता के निर्माण के साधन और उसके बनने के सूचक के रूप में काम करती हैं, तो हमारी भाषा संबंधी सामाजिक अस्मिता भी स्तरीकृत होगी। इस संदर्भ में हम यह कह सकते हैं कि हिंदी भाषी एक स्तर पर अपनी बोलियों से जुड़ा है और दूसरे स्तर पर अपनी भाषा हिंदी से भी।”5इसी प्रकार अहिंदी भाषी एक स्तर पर अपनी जनपदीय भाषा से और अखिल भारतीय संदर्भ में हिंदी और अंग्रेजी से जुड़ा है। एक बँगाली व्यक्ति स्थानीय स्तर पर बँगला का, राष्ट्रीय स्तर पर संपर्क के लिए हिंदी का तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी का प्रयोग करता है। अतः संभव है कि यहाँ दो स्तरों पर टकराव की स्थिति पैदा हो जाए। दक्षिण भारत के लोगों द्वारा राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को स्वीकार न करने के पीछे का कारण दो स्तरों के बीच भाषा का तनाव ही है।

जातीय पुनर्गठन की प्रक्रिया सामाजिक होती है। जहाँ कोई बोली सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों से अधिक महत्त्व प्राप्त कर लेती है तथा आगे चलकर सामाजिक अस्मिता का आधर बन जाती है। आज भाषा के रूप में खड़ी बोली हिंदी विभिन्न बोलियों के मध्य संपर्क भाषा का काम कर रही है तथा अन्य जनपदीय भाषाएँ ब्रज, अवधी, भोजपुरी और मगही आदि उसकी बोलियाँ कहलाती है। अन्यथा हम जानते है की भोजपुरी और मगही अर्धमागधी अपभ्रंश से उत्पन्न है। ग्रियर्सन इसे हिंदी की बोली मानते ही नहीं है। रूपात्मक (व्याकरणिक) दृष्टि से भोजपुरी हिंदी से अलग ठहरती है। वास्तव में भोजपुरी को हिंदी की बोली स्वीकारने के पीछे समान सामाजिक चेतना और संस्कृति के आधार पर बनी जातीय अस्मिता है। इसी प्रकार हिंदी एवं उर्दू का जो सवाल है, वह वास्तव में दो भाषाओं की संरचनागत भेद या समानता का सवाल नहीं है। वह भाषाई अस्मिता का सवाल है। एक समुदाय विशेष उर्दू भाषा में अपनी पहचान पाता है। यह भाषा उसे अपने होने का एहसास दिलाती है।

अतः किसी व्यक्ति, वर्ग, समाज और राष्ट्र की अस्मिता उसकी भाषा से भी व्यक्त होती है। भाषाई अस्मिता किसी देश की एकता में अपनी प्रमुख भूमिका निभाती है। राष्ट्र की सर्वाधिक सशक्त पहचान उसकी भाषा होती है। भाषा से जुड़ी सांस्कृतिक परंपरा किसी भी राष्ट्र की ताकत होती है, जो राष्ट्र निर्माण के कार्य में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधर पर कहा जा सकता है कि भाषा अस्मिता से अभिन्न रूप से जुड़ी होती है। भाषा का इस दृष्टि से अध्ययन एक ओर जहाँ भाषा का समाज से संबंध एंव भाषा के व्यावहारिक महत्व को रेखांकित करता है, वही दूसरी ओर भाषा को देखने-समझने का एक नया आयाम भी प्रस्तुत करता है।